International Journal of Enhanced Research in Educational Development (IJERED)
ISSN: 2320-8708, Vol. 12 Issue 1, Jan.-Feb., 2024, Impact Factor: 8.376

असम्भव सम्भव हो गया-मानोबी बंद्योपाध्याय

डॉ. पवन कुमार

सह आचार्य, गोपालराव पाटिल, राजकीय महाविद्यालय, भैंसा, निर्मल, तेलंगाना

आहार, निद्रा, भय एवं मैथुन ये गुण प्राणी मात्र में स्वाभाविक रूप से होते हैं। किंतु मानव मात्र को देखने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि इन चार गुणों के अतिरिक्त उसमें शोषण का गुण भी सामान्य रूप से पाया जाता है। जब, जहाँ, जिसे अवसर हाथ लगे वह अपने किसी साथी अथवा मातहत का शोषण करने में पीछे नहीं रहता। वर्तमान परिवेश जो उपयोगितावादी दृष्टिकोण का पर्याय बनता जा रहा है अथवा बन चुका है , भी इसी शोषण की प्रवृत्ति से पूर्णतः सम्बद्ध है। हाँ , इसका रूप अथवा स्वरूप व्यक्ति दर व्यक्ति अलग है। इसी शोषण की प्रवृत्ति को मानोबी बंद्योपाध्याय अपनी आत्मकथा 'पुरुष तन में फँसा मेरा स्त्री मन' में उजागर करती हैं।

यह आत्मकथा एक ऐसे व्यक्ति की है जिसका जन्म तो पुरुष के रूप में हुआ किंतु आत्मा जिसे स्त्री की मिली। अपने जीवन में लम्बे संघर्ष के पश्चात् सर्जरी एवं हार्मोन परिवर्तन की सुदीर्घ प्रक्रिया से गुरजरते हुए जिसने स्त्री का शरीर प्राप्त कर पुरुष के शरीर से मुक्ति पाई। अर्थात् वह सोमनाथ नामक पुरुष से मानोबी नामक स्त्री बना। जिसे ट्रांसवूमेन भी कहा जाता है। अपने इसी संघर्ष अथवा शोषण भरे शोषित जीवन की गाथा मानोबी बंद्योपाध्याय अपनी आत्मकथा के माध्यम से समाज के सामने लाती हैं। समाज द्वारा उपेक्षित तृतीय वर्ग या जिसे अंग्रेजी में थर्ड जेंडर कहा जाता है , के संदर्भ में मानोबी बंद्योपाध्याय अपनी आत्मकथा 'पुरुष तन में फंसा स्त्री मन ' मे कहती हैं "आप हिजड़े से घृणा करते हैं , क्योंकि आप उसके लिंग के साथ कोई पहचान नहीं जोड़ पाते। आप उसे एक विचित्र, घृणित जीव ,.....और निश्चित तौर पर एक अनजान समझते हैं "[1]। मानव समाज द्वारा निर्मित खाँचों में यह नहीं आ पाते। जिन्हें मात्र एक लिंगदोष(जननांग) होने पर ही मानव होने की श्रेणी से बहिष्कृत अथवा पदच्युत कर दिया जाता है।

जिन्होंने भी समाज के ऐसे नियम बनाएँ अथवा ऐसी सामाजिक संरचना की उन्होंने एकमात्र लिंग को ही मनुष्य होने का मानक बना दिया। इस एक कमी को छोड़कर सम्बन्धित व्यक्ति(शायद व्यक्ति कहना भी सामाजिक दृष्टि से उचित नहीं) में कई और गुण भी हो तो उनका कोई मूल्य नहीं। अपने जैसे ही अपने एक साथी के बारे में वह बताती है कि "अट्ठाईस वर्षीय ट्रांसजेंडर जगदीश- मैं उसे जूही कहती थी.....वह एक चित्रकार , गायिका और नर्तकी थी "[2]। वैसे किसी भी संस्थान में इस श्रेणी के

व्यक्ति को प्रवेश मिलना असंभव तो नहीं किंतु कठिन अवश्य है। प्रवेश मिल भी जाएँ तो इन्हें असामान्य मान जो भेदभाव होते हैं वे असहनीय हैं।

अपने ही दो सहकर्मियों अंग्रेजी व इतिहास के दो प्रोफ़ेसर सूर्य सेन गुप्ता और शशांक सर द्वारा जो उनका शोषण किया गया उसका यह मात्र एक उदाहरण दृष्टव्य है "वामदल के नेता थे.....कैंपस के दो अघोषित सम्राट थे.....उन्होंने मेरा केरियर तबाह करने की धमकी दी , क्योंकि किसी हिज़डे को प्रोफ़ेसर बनने का अधिकार नहीं था"[3]। "वे मुझे एकांत में देखते ही घेर लेते, मेरे बाल और कपड़े नोचते और कहते कि वे देखना चाहते हैं कि मेरे बाल असली हैं.....देखना चाहते थे कि मेरे कपड़ों के नीचे क्या था"[4]। इस तरह का अशोभनीय व्यवहार कार्यक्षेत्र में उनके साथ होता था।

आत्मकथाकार मानोबी बंद्योपाध्याय जो स्वयं भुक्तभोगी हैं, बताती हैं "मुझे सारा जीवन लोगों के मुख से हिजड़ा, बृहन्नला, नपुंसक, खोजा, लौंडा.....जैसे शब्द सुनने पड़े हैं और मैंने जीवन के इतने वर्ष यह जानते हुए बिताएँ हैं कि मैं एक जातिच्युत व परित्याज्य हूँ"[5]। समाज में हिजड़ों की स्थिति पर ध्यान देने पर हम पाते हैं कि जितनी गालियाँ तथाकथित सभ्य समाज के लोग प्रयोग करते हैं उनमें सबसे खराब यही है।

समाज द्वारा किएँ गएँ शोषण को वह इस प्रकार उजागर करती हैं "लोग मुझे हिज़डा कहते व मेरी यौन लैंगिकता का मज़ाक उड़ाने का कोई अवसर हाथ से न जाने देते परन्तु जब भी मुझे अकेले पाते तो एक अंधेरे कोने में घेर कर , मेरा नाज़ायज लाभ उठाने और यौन शोषण करने वाले भी वही लोग होते"[6]। अर्थात समाज में जिसे हिजड़ा कहकर हेय दृष्टि से देखते हुए मजाक उड़ाता है और जिसे निकृष्ट, किसी भी काम का नहीं मानता उसका भी यौन शोषण करने से बाज नहीं आता।

अपने साथ हुए शोषण की परतें और भी सूक्ष्म रूप से खोलते हुए वह आगे बताती हैं "मैं धीरे-धीरे पड़ोस के बहुत से लोगों के हाथों का सेक्स खिलौना बन गयी थी कुछ लोग तो बाहर ले जाकर , मेरे साथ शारीरिक सम्बन्ध बनाने का साहस रखते और कुछ लोग केवल आस-पास से निकलते हुए मेरे हालात की खिल्ली और मज़ाक उड़ा कर ही सुंतष्ट हो लेते "[7]। अपनी बद से बदतर होती छवि या स्थिति को वह कुछ इस प्रकार दर्शाती हैं "लोगों के लिए मैं पका हुआ फल थी , जिसे कभी भी तोड़कर खाया जा सकता था घर और बाहर दोनों जगह मेरे लिए समान रूप से खतरे मौजूद थे "[8]। अपनी इस स्थिति की तुलना समाज का अंतिम पायदान से भी बाहर रहने वाली वेश्याओं से वह करती हैं। "उन्हें देखने के बाद, मैं कई बार स्वयं से पूछती कि क्या उनकी तरह समाज मेरा भी शोषण कर रहा था "[9]? निस्संदेह इस प्रश्न का उत्तर हाँ ही होगा।

पढ़ाई के दिनों में उनके साथ जो घटा उसे पूरी ईमानदारी से वह बताती हैं "कॉलेज के.....बहुत से लड़के.....मुझे अपने साथ.....एकांत स्थान पर ले जाते ताकि मेरे साथ सेक्स और मौज-मस्ती कर

सकें। मैं भी उनके साथ पूरा आनन्द लेती पर.....मैं इन प्रकरणों से आजिज आने लगी थी और अपने लिए एक स्थायी सम्बन्ध चाहती थी जो मेरी आत्मा को उन्नत बना सके "[10]। अर्थात् कुछ हद तक उन्हें भी यह पसंद था इस बात की स्वीकारोक्ति उनकी ईमानदारी को दर्शाती हैं। जो किसी भी आत्मकथा की पहली शर्त है।

स्वयं को भी इस शोषण के लिए दोषी मानते हुए वह आगे कहती हैं "जो मेरी राह में आये वे मेरे लिए कोई एहसास नहीं रखते थे पर मैं पूरी तरह से उन्हें दोष नहीं दे सकती , क्योंकि मैं ही सबके साथ मौज मना रही थी.....मैं जानती थी कि यह सब अच्छा नहीं था।.....पर मैं चाहकर भी अपनी अस्थायी रंगरलियों से छुटकारा नहीं पा सकी"[11]। वो स्वयं इससे मुक्ति चाहती थीं किंतु कहीं भीतर से आत्मकथाकार को भी यह पसंद भी था।

वह अपने व्यक्तित्व का शुक्लपक्ष स्वयं ही उजागर करती हैं, उसे छिपाती नहीं। उन्हें अपनी छवि की चिंता नहीं, उनके बारे में इस दृष्टिकोण से कोई कुछ भी सोचे वह सच्चाई दर्शाने से पीछे नहीं हटती। वह बताती हैं "जल्दी ही मैं जोर्डन के एक लड़के के सम्पर्क में आयी ,..... हमारे बीच केवल दैहिक सम्बन्ध थे।.....मन बदलने के लिए विदेशी का साथ चाहिए था।.....मुझे उसके ज़रिए कई दूसरे इज़रायल और अरब देशों के छात्रों से मिलने का अवसर मिला।.....हालाँकि इस बर्ताव से मेरे भीतन का सूनापन ज्यों-का-त्यों रहता"[12]। यह या ऐसे सम्बन्ध अपने भीतर के सूनेपन को दूर करने के लिए थे किंतु उन्हें यह समझते देर नहीं लगी कि ऐसे सम्बन्ध तो मात्र ओस चाटने की तरह है जिससे होंठ मात्र कुछ हद गीले होते हैं किंतु प्यास नहीं बुझती। और उनका उद्देश्य मात्र देह या वासना की पूर्ति तक ही सीमित नहीं था। एक-के-बाद-एक प्रेमी से बिछड़ने के कारण जीवन में जो सूनापन आया वह उसे भरना चाहती थीं।

समाज में कई लोग ऐसे होते हैं जो वंचितों , पीड़ितों, शोषितों के प्रति सहानुभूति दर्शाते हैं। कुछ लोग सहानुभूति का दिखावा कर न्याय दिलाने की आड़ में उनका शोषण करते हैं। ऐसे ही एक व्यक्ति के बारे में वे कहती हैं कि "बाद में मुझे पता चल गया था कि यह कपिल की आदत बन गयी थी , वह फ़िल्म बनाने के नाम पर ट्रांसजेंडर लोगों के साथ उसकी रातें रंगीन करता "[13]। अर्थात् सहायता की आड़ में भी शोषण ही होता।

आत्मकथाकार स्वावलंबी बनने पर जोर देते हुए कहती हैं "ट्रांसजेंडर लोग अपनी आजीविका के लिए जो-जो काम करते हैं, मैं उन सभी का समर्थन नहीं करती, पर मैं अपने इस तथाकथित भद्र समाज के पाखंड को भी नहीं सह सकती "[14]। इस तरह जीविकोपार्जन के स्थान पर आत्मकथाकार ने स्वयं के जीवन में जो मार्ग चुना था उस पर प्रकाश डालती हैं "मैं कड़ा परिश्रम करती ताकि कक्षा में प्रथम स्थान मिलता रहे। मुझे एहसास हो गया था कि केवल इसी तरह से , मैं असमानता की इस जंग को जीत सकती थी "[15]। वह कड़ी मेहनत कर आगे बढ़ती है और आगे लिखती हैं "मैंने 2005 में

पी.एच.डी. का काम पूरा किया पर डॉक्टरेट की डिग्री विश्वविद्यालय के दीक्षांत समारोह में 2006 में दी गयी"[16]। उनका यह अटूट विश्वास था कि "जीवन में हर किसी को सफलता का स्वाद चखने का अवसर मिलता है। मुझे कृष्ण नगर वूमन कॉलेज में अपनी नियुक्ति मिली।.....मैं भारत की पहली ट्रांसजेंडर कॉलेज की प्रिंसीपल बनी। असम्भव सम्भव हो गया "[17]। मनुष्य चाहे तो क्या नहीं कर सकता यह उन्होंने सिद्ध कर दिया।

इस स्तर पर पहुँचने के पश्चात् भी उनका संघर्ष थमा नहीं "मैं कई वर्षों तक राज्य के उच्च शिक्षा विभाग से संघर्ष करते हुए उन्हें यह समझाने का प्रयत्न करती रही कि सोमनाथ और मानोबी एक ही थे और इस बात को कानूनी तौर पर भी मान्यता दी जा चुकी है।.....मुझे न्याय तो मिला पर अपनी कई साल की वरिष्ठता खोनी पड़ी "[18]। वैसे संघर्ष तो सामान्यतः जीवन का भाग है ही किंतु यहाँ संघर्ष कई रूपों में एक साथ था।

अपने एवं अपने जैसे ही साथियों के संदर्भ में वह बताती हैं कि "बहुत सारे लड़के(बगुला श्रीकृष्ण कॉलेज) एक-एक कर मेरे पास आते और मानते कि वे भी ट्रांसजेंडर है और माता-पिता व समाज से मिलने वाली प्रताड़ना के डर से अपनी पहचान छिपाए रखते हैं "[19]। जिस पहचान को पाने के लिए वे तरस रहे हैं उसे ही समाज के डर से छिपा कर रख रहे हैं। "कॉलेज की पढ़ाई होने के बाद, मैं मनु श्री चकी सरकार डांस ग्रुप से जुड़ी ,.... वे सभी शारीरिक रूप से पुरुष थे , पर उनकी आत्मा नारी सुलभ थी"[20]। यहाँ पर भी पहचान का संकट था। मानसिक रूप से वे जैसे थे शारीरिक रूप से वैसी पहचान पाने का संकट उन पर था, उन्हें इसके लिए लम्बा संघर्ष करना था।

आत्मकथाकार की तरह साहस न कर पाने अथवा अन्य कारणों से जो सर्जरी नहीं करवा सकें उनके विषय में वह बताती हैं "वे साड़ी, सलवार-सूट और स्कर्ट वगैरह पहनकर मेकअप करते ताकि अपने भीतर की स्त्री को संतुष्ट कर सकें , परन्तु उनके कपड़ो के नीचे पुरुष गुप्तांग ज्यों का त्यों रहता क्योंकि वे न तो बधिया करवाना चाहते थे न उनके पास सेक्स चेंज ऑपरेशन के लिए पैसा था।..... ऐसे बहुत से लोग हैं जो आधे-अधूरे तरीके से बधिया करवाने के लिए राज़ी हो जाते हैं आप इस प्रक्रिया की तुलना घोड़ो के बधिया करने की प्रक्रिया से कर सकते हैं.....यह काम बिना किसी चिकित्सकीय देख-रेख के किया जाता है और अक्सर ऐसे मामलों में प्रभावित व्यक्ति की जान पर बन जाती है"[21]। स्त्रियों की तरह कपड़े इत्यादि पहन कर किसी तरह वे स्वयं को संतुष्ट तो कर लेती किंतु गुप्तांग तो वही रहता। और जानवरो को जिस तरह से बधिया किया जाता है उसी प्रकार से इनका भी बधियाकरण होना समाज के लिए तथा समाज द्वारा इन पर थोपी गई मान्ताओं के पर कई प्रकार के प्रश्न खड़े करता है। ऐसा ही एक उदाहरण आत्मकताकार प्रस्तुत करती हैं "ट्रांस्जेंडर-जॉली ने अपना लिंग अपने हाथों से काट लिया और.....बाद में बधिया करवाना चाहा पर डॉक्टर उसके लिए एक योनि तैयार करने में नाकाम रहे।.....उसने अपना नाम बदल लिया और भारत-नेपाल सीमा पर एक, कामयाब ट्रांसजेंडर बन गयी"[22]। प्राकृतिक रूप से जो जैसा ही उसे उसी रूप में स्वीकार करने की

परिपक्वता का विकास अभी मानव समाज में नहीं हुआ अथवा उस स्तर पर मानवता नहीं पहुँची। और जब तक इस दृष्टि से विकास नहीं होगा तब तक मानव समाज में मानव द्वारा साथी मानव का शोषण थमने वाला नहीं।

संदर्भः

1. पृ. 5
2. पृ. 67
3. पृ. 84
4. पृ. 85
5. पृ. 5
6. पृ. 39
7. पृ. 40
8. पृ. 49
9. पृ. 46
10. पृ. 46
11. पृ. 46-47
12. पृ. 59
13. पृ. 80
14. पृ. 75
15. पृ. 18
16. पृ. 140
17. पृ. 150
18. पृ. 140
19. पृ. 64
20. पृ. 64
21. पृ. 101
22. पृ. 41